महर्षि दयानन्द सरस्वती

प्रकाशक
आर्य प्रकाशन मण्डल
IX/221, सरस्वती भण्डार
गांधी नगर दिल्ली-110031

प्रथम संस्करण
1991

कला पक्ष
पार्थ सेनगुप्त

मूल्य
पच्चीस रुपये

मुद्रक :
विमल आफसैट
1/11804, पंचशील गार्डन नवीन शाहदरा
दिल्ली-110032

MAHRSHI DAYANAND SARASWATI (*Children Poetry*)
by Chandrapal Singh Yadav 'Mayank' Rs. 25.00

महापुरुषों की दृष्टि में 'महर्षि दयानन्द सरस्वती'

"महार्षि दयानन्द हिन्दुस्तान के आधुनिक ऋषियों, सुधारकों, श्रेष्ठ पुरुषों में से एक थे। उनके ब्रह्मचर्य, विचार-स्वतंत्रता, सबके प्रति प्रेम, कार्यकुशलता आदि गुण लोगों को मुग्ध करते थे। उनके जीवन का प्रभाव हिन्दुस्तान पर बहुत पड़ा है। मैं जैसे-जैसे प्रगति करता हूँ, वैसे-वैसे मुझे महर्षिजी का बताया मार्ग दिखाई देता है।" ***महात्मा गांधी***

"मेरा सादर प्रणाम हो उस महान गुरुदेव दयानन्द को, जिसकी दृष्टि ने भारत के आध्यात्मिक इतिहास में सत्य और एकता को देखा। जिस गुरु का उद्देश्य भारतवर्ष को अविद्या, आलस्य और प्राचीन ऐतिहासिक तत्व के अज्ञान से मुक्त कर सत्य और पवित्रता की जागृति में लाना था।" ***रवीन्द्रनाथ टैगोर***

"यदि स्वामी जी न होते, तो हिन्दुस्तान की क्या हालत होती, इसकी कल्पना भी कठिन थी। शताब्दियों के बाद ही ऐसे महापुरुष मिलते हैं। समाज में जब बुराइयां घर कर जाती हैं, तब ईश्वर ऐसी विभूतियों को भेजता है। ऐसे महापुरुष कभी मरते नहीं हैं, वे अमर रहते हैं।" ***सरदार पटेल***

●

था अज्ञान-अँधेरा छाया,
पाखंडों ने जाल बिछाया!
गौरव-गरिमा के उन्नायक!
तूने सोता देश जगाया!

सीधी-सच्ची बात बतायी,
पाखंडों पर किया प्रहार!

ऋषिवर दयानन्द! तेरे हैं
हम सब पर असीम उपकार!

चन्द्रपालसिंह यादव *'मयंक'*
261, फेथफुलगंज, कैन्ट
कानपुर-208004

क्रम

महर्षि दयानन्द सरस्वती

(बाल-काव्य)

जन्म व शिक्षा-प्राप्ति

गुजरात-काठियावाड़ प्रान्त में,
एक नगर है 'टंकारा'।
वहाँ ज्योति प्रकटी—फैला था
जिसका दिशि-दिशि उजियारा।

सज्जन एक वहाँ रहते थे
'कर्शन लाल त्रिवेदी'।
छोटे-छोटे राज्य वहाँ थे,
जिनमें एक 'मौरवी'।

जमेदार 'मौरवी' राज्य के
'कर्शन जी' नियुक्त उस ठौर।
थे शिव-भक्त, नहीं था उन-सा
व्यक्ति धार्मिक और!

एक पुत्र ने जन्म लिया था।
तब कर्शन जी के घर।
था प्यारा-प्यारा बच्चा
कहते सब उसे 'मूलशंकर'।

सन् अट्ठारह सौ चौविस का
बच्चो! मैं बतलाता हाल।
इस बच्चे ने अपने जीवन
में था अनुपम किया कमाल।

बड़ा हुआ तो यही पुत्र
'ऋषि दयानन्द' कहलाया था।
ज्ञान प्राप्त कर, महर्षि बन कर
सोता देश जगाया था।

बड़े विद्वत्तापूर्ण कई
अनुपम ग्रन्थों की रचना कर।
ज्ञान-प्रकाश बिखेरा दिशि-दिशि,
नाम सदा को किया अमर।

अट्ठारह सौ पचहत्तर में
'आर्य समाज' बनाया था।
वेदों का डंका आलम में
ऋषिवर ने बजवाया था।

महर्षि की मैं अमर कहानी,
बच्चो! तुम्हें सुनाता हूँ।
कैसे सोता देश जगाया?
यह तुमको बतलाता हूँ।



ब्राम्हण सुत था, बाल्यकाल में
शिक्षा गई दिलाई थी।
तीव्र बुद्धि बालक ने शिक्षा
में भी रुचि दिखलाई थी।

तेरह वर्ष आयु—संस्कृत-
व्याकरण व रुद्राध्यायी
यजुर्वेद-संहिता आदि की
सारी शिक्षा पायी।

ब्राह्मण-पुत्र कर सके पालन
जीवन में कुल-धर्म।
यही उचित कर्त्तव्य-प्राप्त
करना शिक्षा था कर्म।

तेरह वर्ष आयु होने तक
यह सब शिक्षा पाकर।
तीव्र बुद्धि बालक ने सबको
दिया चकित घर में कर।

और 'मूलशंकर' के जीवन
में वह घटना आई।
भारी हलचल और क्रान्ति
जो जीवन में थी लाई।

ये सच्चे 'शिव' नहीं !

और तभी शिवरात्रि पर्व था
धूम-धाम से आया।
सारे घर ने व्रत रक्खा,
पूजन में ध्यान लगाया।

थे शिव-भक्त! सभी ने दिन भर
शिवजी का पूजन कर।
व्रत रख कर उत्साहपूर्वक
किया कीर्तन दिन भर !

घर में ही शिव का मन्दिर था,
वहीं सभी घर वाले
पूजन-आराधन-कीर्तन में
हुए सभी मतवाले।

धीरे-धीरे बीत गया दिन !
रजनी रानी आई !
अधिक थकावट से तब निद्रा
घर वालों को लाई!

किन्तु 'मूलशंकर' जगता,
उसने न पलक झपकाई।
था उत्साह भरा नस-नस में
निद्रा दूर भगाई।

वहीं मूर्ति शिव जी की रक्खी,
उस पर चढ़े हुए फल।
तभी किसी कोने से आया,
नन्हा चूहा-चंचल।

चारों ओर देखता, चूहा
धीरे-धीरे आया।
बड़े सशंकित मन से उसने
अपना पैर बढ़ाया।

शिव जी पर जो बेर चढ़ा था,
उसको तुरन्त कुतर कर।
चला वहाँ से, रुका न पल भर—
एक बेर को लेकर।

बड़े ध्यान से देख रहा था
चूहे की यह लीला।
उसके मुख का रंग पड़ गया
अति चिन्ता से पीला।



सोच रहा था वहाँ
मूलशंकर मन में घबराते—
"जो अपने भोजन की रक्षा
हाय! नहीं कर पाते।

ये कैसे शिव? जिनका भोजन
चूहे भी ले जाते!
नन्हे चूहे से भी अपना
भोजन बचा न पाते!

यह सच्चे शिव नहीं,
वास्तविक शिव है कोई और।
अब मैं उसको ही ढूँढूँगा,
देखूँ उसका ठौर।

शिव तो सबका रक्षक है,
करता सबका कल्याण।
इसीलिए तो शिव की पूजा
करते हैं इंसान।

यह तो 'शिव' हैं ही नहीं,
करेंगे यह कैसे कल्याण ?
नन्हा-सा चूहा भी इनको
करता जब हैरान।

यह है केवल मूर्ति! नहीं है
इसमें शक्ति जरा भी !
मेरे मन में इसके प्रति है
शेष न भक्ति जरा भी !

अब सच्चे शिव को खोजूँगा,
ढूँढूँगा जीवन में।
है भर गयी अजब बेचैनी
सी मेरे तन-मन में।"

ऐसे ही विचार उठ-उठ कर
व्याकुल उसे बनाते।
और मूलशंकर रजनी को
देख रहा था जाते।

गृह-त्याग

और मूलशंकर ने शंका
सुबह पिता से बतलाई।
तो शंका के लिये पिता से
काफी डाँट-डपट खाई।

फिर भी सच्चे शिव की शंका
मन में बेचैनी लाती।
चैन न लेने देती उसको,
तबीयत रह-रह घबराती।

"प्रस्तर-मूर्ति कभी सच्चा शिव
हाय! नहीं बन पायेगी।
मेरे मन की यह जिज्ञासा
कभी नहीं मिट पायेगी?

प्रस्तर-मूर्ति भला कैसे
कर सकती मानव का कल्याण?
सच्चे शिव की खोज बनेगी।
मेरे जीवन का वरदान !"

इसी भाँति दिन बीत रहे थे
किन्तु मूलशंकर का मन
चिन्तित उसे बनाये रखता,
किये हुए मन को उन्मन !

तभी मूलशंकर की भगिनी
थी बन गई काल का ग्रास !
अब नवयुवक मूलशंकर को
यह घटना कर गई उदास !

मानव-जीवन की असारता
बना गई मन को व्याकुल।
होता जाता दुखी दिनो-दिन,
शोकमग्न उर चिन्ताकुल।

जन्म-मरण के इस बन्धन से
मुक्त बने मानव-जीवन !
इसका क्या उपाय हो सकता—
दूर हो सके यह बन्धन ?

अब उन्नीस वर्ष का था,
बच्चो ! नवयुवक मूलशंकर !
तभी एक घटना ने उसको
था झकझोर दिया कस कर।

थे परिवार-बीच चाचा जी
बड़े धर्मप्रिय औ' विद्वान।
उनको भी ले जाने का—
यमराज कर उठा पुनः विधान।

वैद्य और सब चिकित्सकों के
हुए प्रयत्न सभी निष्फल!
हालत गिरती ही जाती थी,
आँखों से गिरता था जल।

और मूलशंकर भी रोता,
देख रहा 'चाचा' की ओर!
जीर्ण-शीर्ण-दुखिया चाचा की
टूट गई जीवन की डोर!

सभी शोक से व्याकुल, रोते
आँसू-धार बहाते थे!
प्रिय-वियोग से मृत्यु दुखी
कर गई, सभी दुख पाते थे!

अब नवयुवक मूलशंकर का
घर से लगा उचटने मन।
था वैराग्य खींचता उसको,
दुख-दायक है यह बन्धन।

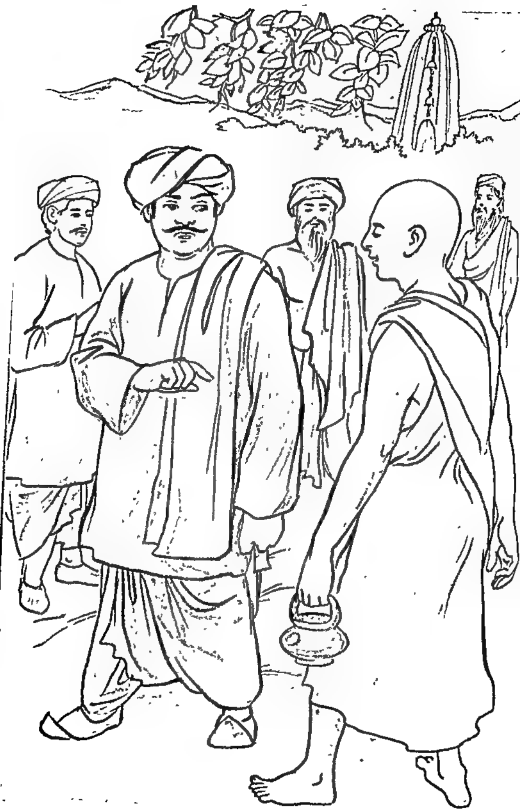
भनक पिता जी के कानों में
जब इन बातों की आई !
करें पुत्र का शुभ-विवाह अब—
उन ने मन में ठहराई !

अब विवाह होने वाला है—
जब उसने यह सुन पाया।
युवक मूलशंकर बेचारा
तब मन ही मन घबराया।

क्योंकि मूलशंकर गृहस्थ-
जीवन से तो उकताया था !
बीमारी औ' मृत्यु देख कर
उसका मन भर आया था !

घर रहने में दुख ही दुख है,
यहाँ दुखी होगा जीवन !
शोक और चिन्ता से हर क्षण
व्याकुल बना रहेगा मन !

घर तज कर वह बाहर निकले,
यही समझ में आया था।
अब गृह-त्याग करे वह तत्क्षण—
यह मन में ठहराया था।



बाईस वर्ष आयु थी उसकी
था उत्साह भरा मन में।
सच्चे शिव की खोज करूँ मैं—
उठी भावना जीवन में।

मातु-पिता का प्रेम, सुरक्षा—
रोक न सके उसे घर में
उसने जीवन-नाव छोड़ दी
जग के अथाह सागर में।

जरा-मरण का भय मिट जाये
मोक्ष-मार्ग यदि दिख जाये !
तभी मूलशंकर के मन में
थोड़ी स्थिरता आये !

गुरु की खोज

दिखा सके जो मार्ग मोक्ष का,
ऐसे गुरुवर की थी खोज !
रहा भटकता युवक मूलशंकर
पन्द्रह वर्षों तक रोज !

रोज सुबह प्राची-अंचल से
सूरज निज मुख दिखलाता !
धीरे-धीरे सूरज का रथ
पूरब से पश्चिम जाता !

सूरज संध्या को छिप जाता,
मुस्काती रजनी आती !
जगती-तल पर तब मयंक की
रजत-चन्द्रिका बिछ जाती !

रात बीतती, फिर दिन आता !
दिन समाप्त हो जाता था !
एक-एक कर जीवन का यों
दिवस निकलता जाता था !

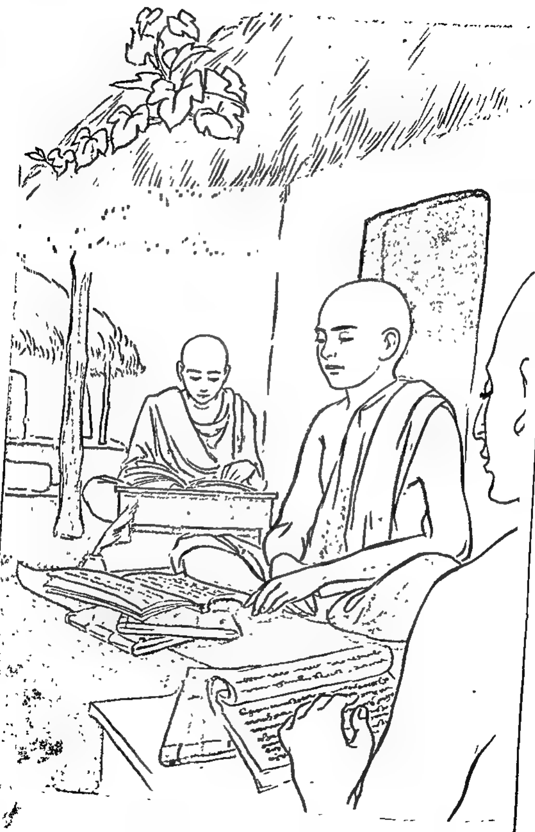
रहा भटकता गुफा-जंगलों-
मठों-तीर्थ स्थानों में !
बियाबान जंगल में भटका,
ऊँचे बर्फिस्थानों में !

सर्दी-गर्मी-भूख-प्यास कुछ
बुझा न पाती मन की आग !
पर बेचैन मूलशंकर तब—
इत-उत नित्य रहा था भाग !

मिले ज्ञान-यात्रा में उनको
पहुँचे हुए ब्रह्मचारी !
इनसे दीक्षित हुए—बने थे
शुद्ध चेतन ब्रह्मचारी !

मिले नर्मदा-तट पर उनको
गुरु पूर्णानन्द सरस्वती !
इनसे शिक्षा ले संन्यासी बने,
हुए 'दयानन्द सरस्वती'!

अब 'संन्यासी दयानन्द' थे—
रहा न शेष 'मूलशंकर' !
लेकर भी संन्यास, कर रहे
सच्चे गुरु की खोज निरन्तर



मिले महन्त एक तब उनको,
अपना चेला इन्हें बना कर।
लालच दिया—कि गद्दी इनको
दे देंगे हम आगे चल कर।

दयानन्द ने मना कर दिया,
गद्दी का लालच ठुकराया!
महन्त बन गद्दी लेने का—
नहीं विचार उन्हें था आया!

इधर-उधर ये रहे भटकते,
बीत गये यों पन्द्रह वर्ष।
गुरुवर विरजानन्द मिले, तब
जीवन में आया उत्कर्ष!

मथुरा में निवास करते थे,
'दण्डी स्वामी विरजानन्द'।
मिला योग्य गुरु उन्हें अन्त में,
दयानन्द के मन आनन्द।

गुरुवर विरजानन्द सरस्वती

गुरुवर विरजानन्द शिष्य से
थे अतिशय प्रसन्न मन में !
योग्य शिष्य अब मिला उन्हें था
अपने लम्बे जीवन में !

गुरु थे प्रज्ञाचक्षु—न उनको
पड़ता कुछ भी दिखलाई !
किन्तु ज्ञान-विद्वत्ता असीमित !
कीर्ति चतुर्दिक थी छाई !

पाणिनि-व्याकरण, आर्ष ग्रन्थों के
थे प्रकाण्ड पंडित गुरुवर !
अब अध्यापन-क्रम चल निकला,
मिला गुरु को शिष्य प्रवर !

ढाई वर्ष तक दयानन्द ने
गुरु से विद्याध्ययन किया !
गुरु-सेवा-संग कड़ा परिश्रम;
पढ़कर उस पर मनन किया !



कड़े परिश्रम-ब्रह्मचर्य से
मुख पर तेज झलकता था!
और विद्वत्ता के प्रकाश से
आनन दिव्य चमकता था!

शिक्षा की समाप्ति पर कर में
थोड़ी सी लौंगें लेकर—
गुरु-दक्षिणा-रूप देने को
हुआ विनम्र शिष्य तत्पर!

गुरुवर बोले, "यह क्या देते?"
बोला विनत वदन—"गुरुवर!
कुछ लवंग सेवा में लाया,
ले लें आप, अनुग्रह कर!"

वाणी में अति कोमलता भर,
गुरुवर ने यह बात कही—
(ऐसा लगा—कि बोल रही है
स्वयं घोर-गम्भीर मही!)

"बेटा! जा, पढ़-लिख कर करना
मातृभूमि का तू कल्याण।
कुरीतियों की सैन्य कर रही
अपने भारत को म्रियमाण।

कुरीतियों का दुर्ग ढहाना,
सुरीतियों का दिव्य प्रचार।
है पाखण्ड हर तरफ फैला,
इसका करना है संहार।

जनता है हर ओर अशिक्षित,
शिक्षित इसे बनाना है।
अन्धकार में सोये हैं सब,
सोता देश जगाना है।

तुझको मुझसे ज्ञान मिला है,
इसको तू हर ओर बिखेर!
ज्ञान-प्रकाश तुझे छिटकाना—
इसमें करना तनिक न देर!

वैदिक धर्म समाप्त हो रहा,
बुझती ज्योति जलाना तुम।
वेदों का पावन सन्देशा
अब हर ओर सुनाना तुम।"

गुरुवर ने यों दयानन्द को
शिक्षाप्रद उपदेश दिया।
जिससे हो कल्याण देश का
वह पावन आदेश दिया।

नूतन ज्ञान-ज्योति

सन् उन्नीस सौ बीस वर्ष था,
जब आश्रम छोड़ा प्रमुदित।
देशोद्धार-कार्य में स्वामी
दयानन्द ने देकर चित्त——

किया धर्म-उपदेश देश में;
कुरीतियों का खण्डन कर।
वेद-धर्म का प्रतिपादन कर,
सत्य-धर्म का मण्डन कर।

मत-मतान्तरों और मजहबों
के फैले जो कुसंस्कार!
जन-जीवन में घुसे हुए थे,
भ्रममूलक जो भ्रमित विचार!

उनका स्वामी दयानन्द जी
करते थे खण्डन डट कर!
जीवन श्रेष्ठ बनाने वाली
वेदों की शिक्षा देकर!



जीवन उन्नत करने वाला
सत्य-प्रकाश दिखाते थे !
वेद-धर्म-प्रतिपादित सबको
सत्‌शिक्षा बतलाते थे !

गौर वर्ण, अति हृष्ट-पुष्ट तन,
तेजस्वी चेहरा सुन्दर !
था गम्भीर और रोबीला,
सिंह-सदृश महर्षि का स्वर!

जब व्याख्यान शुरू करते थे,
करके वेद-मंत्र का पाठ।
मंत्र-मुग्ध हो जाते श्रोता,
जुट जाता था अनुपम ठाठ।

जनता खिंची चली आती थी,
सुनने को उनका प्रवचन !
क्रान्ति देश में फैल रही थी,
खुलते जाते बन्द नयन !

पहले-पहले स्वामी जी ने
'स्वराज्य' की बतलाई बात !
कहा, "गुलामी में दुख ही दुख !
'स्वतंत्रता' का दिव्य प्रभात—

अपने भारत में ले आओ,
स्वतंत्रता में है सम्मान !
पीछे पैर न रखना हरगिज़
हँस कर करो त्याग-बलिदान !

त्याग और बलिदान-क्षेत्र में
गिरता है जब जीवन-जल।
तभी-तभी तो खिल पाता है
स्वतंत्रता का दिव्य कमल।"

मथुरा से वह गये आगरा,
फिर धौलपुर व ग्वालियर।
वैदिक धर्म, नूतन विचारों का
रहे सब जगह प्रचार कर।

ग्वालियर से जयपुर पहुँचे
किया मूर्ति-पूजा-खण्डन।
फिर तो वाद-विवाद लगे
करने स्वामी से पंडितगण।

दयानन्द स्वामी सचमुच ही
थे अत्यन्त श्रेष्ठ विद्वान !
पतंजलि के महाभाष्य से
स्वामी जी ने दिया प्रमाण !

हुए निरुत्तर सारे पंडित
सुन कर दयानन्द की बात !
स्वामी जी का ज्ञान सराहा,
मान गये वे अपनी मात !

ऋषिवर की विद्वत्ता सुशोभित
हुई वहाँ पर ज्यों जलजात!
अन्धकार में ज्यों मयंक से
खिल उठती है काली रात!

शारीरिक व मानसिक बल के
साथ-साथ प्रतिभा अनुपम।
ब्रह्मचर्य का तेज, चमकता चेहरा;
प्रतिभा का संगम !

महर्षि स्वामी दयानन्द-यश
लगा फैलने चारों ओर !
उनका प्रवचन सुन कर श्रोता
हो जाते आनन्द-विभोर !

निराकार ईश्वर की सत्ता,
वेद-ज्ञान पर दृढ़ विश्वास !
दिन पर दिन हर ओर फैलता
स्वामी जी का ज्ञान-प्रकाश !

संवत उन्नीस सौ तेईस में
महाकुम्भ का आयोजन
हरिद्वार में हुआ, वहाँ पर
भारत के सब धार्मिक जन

हुए इकट्ठा, इतनी भारी
भीड़ हो गई जनता की !
सभी ओर तो जन-समूह था,
जगह न रही कहीं बाकी !

सभी अन्ध-विश्वासपूर्ण थे,
समझे—यही स्वर्ग सोपान
पाखण्डों से प्रेरित, करते
दिखावटी सब धर्म-विधान!

महाकुम्भ के अवसर पर जब
स्वामी जी पहुँचे हरिद्वार,
भीड़-भाड़ औ' प्रदर्शनी से
उनके मन में उठा विचार—

"हा! कैसा पाखण्ड देश में
फैल रहा है, ऐ ईश्वर !
यहाँ धर्म के नाम हो रहा
अधर्म का कैसा चक्कर ?

इसका खण्डन है आवश्यक !
होगा तभी देश-कल्याण !"
झट 'पाखण्ड-खण्डिनी पताका'
का महर्षि ने किया विधान।

थी पाखण्ड खण्डिनी पताका
हरिद्वार में फहराई !
आर्य ज्ञान की बातें ऋषि ने
जनता को तब बतलाईं !

नई चेतना, नई ज्ञान की
दृष्टि वहाँ सब में आई।
नई ज्योति देखी जन-जन ने,
नई बात थी सुन पाई।

सत्य-ज्ञान का शुभ प्रकाश अब
फैल रहा था चारों ओर !
दयानन्द स्वामी बिखेरते
नूतन ज्ञान-ज्योति उस ठौर !

महर्षि की समाज-सेवा

अट्ठारह सौ पचहत्तर में
स्थापित कर 'आर्यसमाज'।
सूत्रपात कर दिया देश में
सेवा-संस्था का शुभ साज।

हुआ बम्बई नगर-बीच
स्वामी जी का यह कार्य महान्!
महर्षि के आदेशों पर जो
समाज का करता उत्थान!

कुरीतियाँ खोखला बनातीं
जो समाज अन्दर-अन्दर!
उन पर किया प्रहार वेग से
दयानन्द जी ने डट कर!

बाल-विवाह बन्द करवाया,
विधवाओं का किया विवाह!
घुन जो लगता था समाज में
रोका उसका दुष्ट प्रवाह!

शिक्षा का प्रचार करवाया !
थे विद्यालय खुलवाये !
जिनमें लड़के और लड़कियाँ
घर-घर से पढ़ने आये !

बालक औ' बालिका—सभी के
हैं अपने-अपने स्कूल !
जिनमें शिक्षा प्राप्त कर रहे,
भारत की कलियाँ औ' फूल !

शिक्षित व्यक्ति सदा समाज को
उन्नति-पथ पर ले जाते !
हैं यश की सुगन्धि बिखराते,
जब भी जहाँ-जहाँ जाते

श्रोताओं में तो स्वामी जी
करते जगह-जगह प्रवचन।
साथ-साथ करवाते चलते
थे सद्ग्रन्थों का लेखन।

तभी लिखाया था महर्षि ने
सुप्रसिद्ध सत्यार्थ प्रकाश।
जो पढ़ने पर अन्धकार का,
पाखण्डों का करता नाश।

ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका—
बोल-बोल कर लिखवाते।
महर्षि ऐसे सद्ग्रन्थों का
थे प्रणयन करते जाते।

वेद भाष्य व अन्य व्याकरण
यात्रा में ही लिखवाये।
ज्ञान-प्रकाश देश की जनता
के जीवन में जो लाये।

एक बात है अति महत्व की—
हिन्दी भाषा से था प्यार।
स्वामी दयानन्द हिन्दी में
ही लिखवाते सदा विचार।

थे गुजरात प्रान्त में जन्मे,
भाषा थी 'गुजराती'।
अध्ययन किया 'संस्कृत' में था
वह भी अच्छी आती!

स्वामी जी परन्तु हिन्दी में
ही करते थे प्रवचन!
हिन्दी भाषा में ही था
करवाया पुस्तक-लेखन।

'स्वतंत्रता' का था महत्व
स्वामी जी ने बतलाया।
'स्वतंत्रता' की ओर देश का
पहले ध्यान दिलाया।

"कोई कितना करे स्वदेशी
राज्य सदा सर्वोत्तम !
राज्य विदेशी इसकी तुलना
में सदैव रहता कम !

पक्षपात से शून्य, प्रजा-प्रिय
न्यायी राज्य विदेशी—
श्रेष्ठ न होता ! अच्छा होता
हरदम राज्य स्वदेशी !

स्वतंत्रता में देश-जाति का
बढ़ता है सम्मान!
'स्वतंत्रता' का है महत्व !
यह होती बड़ी महान् !

दयानन्द जी ने बतलाई
स्वतंत्रता की बात।
हम सब शीघ्र देश में लावें
पुण्य स्वतंत्र प्रभात।

दयानन्द स्वामी सचमुच ही
थे भारी विद्वान !
कितने ही 'शास्त्रार्थ' किये
थे, जिनमें अतुलित ज्ञान !

'काशी का शास्त्रार्थ' हुआ
जीवन में बड़ा प्रसिद्ध !
एक बार फिर हुई विद्वत्ता
स्वामी जी की सिद्ध !

इस प्रकार से बीस वर्ष तक
करते रहे प्रचार।
किया विविध विधि भारत की
जनता का था उपकार।

दयानन्द जी का यश फैला
भारत में सब ओर !
दिया देश को महर्षि ने था
एक बार झकझोर !

यही नहीं, भारत के बाहर
फैला उनका नाम !
देखा बच्चो—महर्षि ने थे
किये अलौकिक काम !

रियासतों में समाज-सेवा

अब भारत की रियासतों में
जाने का था किया विचार !
ताकि महर्षि कर सकें अपना
रियासतों में धर्म-प्रचार।

कितनी ही रियासतों के
राजा बन गये शिष्य इनके।
उनको भी सब शिक्षाएँ दीं;
कर्त्तव्य सुझाये जीवन के।

पहले गये उदयपुर में
फिर जोधपुर व शाहपुर-बीच।
था कर्त्तव्य महर्षि दयानन्द
को इस ओर रहा तब खींच।

इसी भ्रमण-क्रम में वे पहुँचे
जोधपुर में जाकर।
महाराज जसवन्तसिंह थे
शासक चतुर वहाँ पर।



वह भी शिष्य बन गये इनके,
सुनते अब उपदेश।
किन्तु स्वार्थी लोगों से है
भरा हुआ यह देश।

स्वार्थी लोगों को महर्षि की
बात न रंचक भायी !
महर्षि से बदला लेने की
दुष्टों ने ठहरायी !

वहां वेश्या एक बड़ी
सुन्दर थी 'मुन्नीजान'।
राजा की मुँहलगी बहुत वह;
थी भारी शैतान।

महर्षि को यह ज्ञात हुआ,
तो राजा पर झल्लाये।
बोले—"महाराज ! क्या करते?
ठीक नहीं यह, हाय !

क्षत्रिय कुल के भूषण होकर
वेश्या का क्यों संग?
सिंह भला 'कुतिया' से कैसे
करता है रस-रंग?"

महाराज को बात लग गई
उसे कर दिया दूर !
वेश्या दुखी हो गई मन में,
थी अब तो मजबूर !

उसने सोचा—"इस स्वामी की
हत्या करवा दूँ !
इसे मिले भड़काने का फल !
मैं इसको मरवा दूँ !"

प्रतिहिंसा की अग्नि भड़क कर
हर लेती सब चैन !
क्रोधित मानव को हरदम
करती रहती बेचैन !

आठ प्रहर उसके मन में है
जलती रहती आग !
तन-मन का सन्तोष शान्ति-सुख
सब जाते हैं भाग !

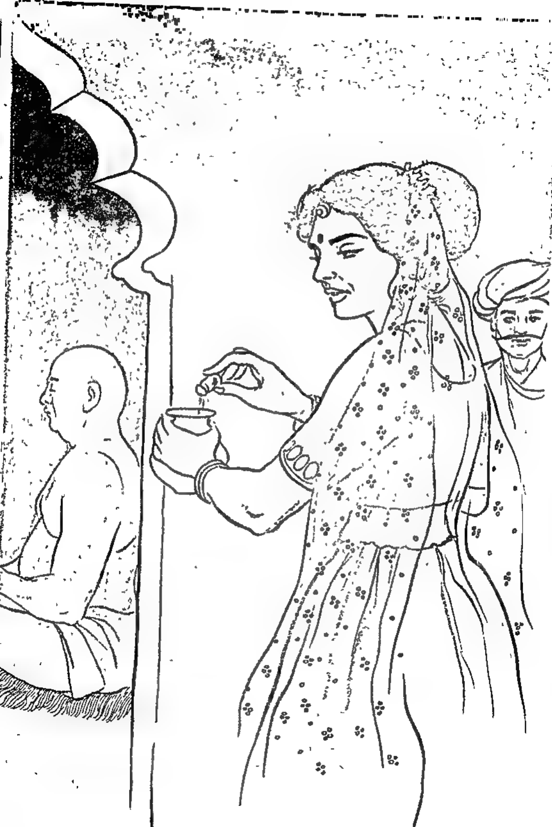
महर्षि का निर्वाण

कुटिल वेश्या ने हत्या षड्यंत्र .
तुरत ही रच कर;
रसोइये को मिला लिया था
धन का लालच देकर।

क्या-क्या नहीं अनर्थ लोभ ने
इस जग में करवाये?
लोभ और लालच ने कितने
ही सज्जन मरवाये।

रसोइये ने पीसा काँच
दुग्ध में उसे मिलाया !
महर्षि को धोखे में रखकर
था दूध वह पिलाया !

विष का किया प्रभाव काँच ने
स्वामी जी के ऊपर !
फोड़े फूट पड़े शरीर पर,
कष्ट भयानक देकर !



क्षमाशीलता का महर्षि ने
था दृष्टान्त दिखाया !
घोर अधर्मी उस घातक को
ऋषि ने दूर भगाया !

भला कहाँ दृष्टान्त मिलेगा
ऐसा जग में, भाई !
अपने हत्यारे की घायल
ने हो जान बचाई !

भगा दिया स्वामी ने उसको,
पुलिस न कहीं पकड़ कर—
नीच-दुरात्मा-घातक को
रख दे जंजीर जकड़ कर।

विष देने का फल न नीच वह
निज जीवन में पाये।
करके भी अपराध दुरात्मा
दंड नहीं पा जाये।

देखो स्वामी की महानता !
कितना हृदय विशाल!
उनको भी था विष दे डाला;
था कितना चाण्डाल !

क्षमाशीलता का अति अद्भुत
दिखलाया दृष्टान्त !
जिसने था विष दिया, उसी का
बचा दिया प्राणान्त !

हाय! पूरे दो मास कष्ट
कितना महर्षि ने पाया !
ईश्वर की लीला अद्भुत—
सज्जन ने कष्ट उठाया !

तीस अक्टूबर उन्नीस सौ
तेईस का था वह साल !
चला गया दिव्य लोक को
भारत-माँ का लाल !

"ईश्वर! तेरी इच्छा पूर्ण हो !"
स्वामी जी यह कह कर।
छोड़ गये थे इस दुनिया को
रहा यहाँ तन नश्वर।

हाय ! हन्त ! भारत में उस दिन
दीवाली की रात !
जब महर्षि का खत्म हो गया
था जीवन-जलजात !



महर्षि ने अपने जीवन भर
किये सुनहले काम !
जिनसे उनका जगमग-जगमग
चमक रहा है नाम !

धन्य-धन्य ऋषि दयानन्द जी
धन्य-धन्य सत्कर्म महान् !
देते रहे सदा जीवन में
ज्ञान व सत्‌शिक्षा का दान !

निज आत्मा की उन्नति के संग
करते रहे जगत-कल्याण !
और अन्त में हँसते-हँसते
प्राप्त कर लिया था निवार्ण।

ऋषिवर का 'सत्यार्थ प्रकाश'

अन्धकार, अज्ञान, अविद्या
का करता है शीघ्र विनाश।
ऋषिवर का 'सत्यार्थ प्रकाश'!
ऋषिवर का 'सत्यार्थ प्रकाश'!

मानव को सत्पथ दिखलाने
को ऋषिवर ने इसे लिखा!
जग में अनुपम ज्ञान-ज्योति यह!
मानवता की दीप-शिखा!

इसमें चौदह समुल्लास हैं
जिनमें अनुपम ज्ञान भरा।
इसको पढ़ कर अगणित जन के
मन में दिव्यालोक झरा।

जगमग ज्योति विकीर्णित करता;
ऐसा इसका सुखद प्रकाश!
ऋषिवर का 'सत्यार्थ प्रकाश'!
ऋषिवर का 'सत्यार्थ प्रकाश!'

'पहले' में हमको मिलते हैं
परमपिता ईश्वर के नाम।
फिर 'द्वितीय' में सन्तानों की
लालन-पालन-विधि अभिराम।

है 'तृतीय' में 'ब्रह्मचर्य' की
और पठन-पाठन की रीति।
तब 'चतुर्थ' में शुभ विवाह—
औ' पति-पत्नी की मधुमय प्रीति।

सुखमय जीवन-यापन की यह
नित शिक्षा देता अविनाश!
ऋषिवर का 'सत्यार्थ प्रकाश'!
ऋषिवर का 'सत्यार्थ प्रकाश'!

'पंचम' में वानप्रस्थ औ'
संन्यासाश्रम की दीक्षा!
और 'षष्ठ' में राजनीति की,
राजधर्म की है शिक्षा!

'सप्तम' में वेदोक्त विषयों का
है ऋषिवर ने देकर ज्ञान;
'अष्टम' में बतलाया जगदुत्पत्ति'
स्थिति औ' प्रलय-विधान।



जग-जीवन की सभी समस्या
का श्रेयस्कर किया विकास !
ऋषिवर का 'सत्यार्थ प्रकाश' !
ऋषिवर का 'सत्यार्थ प्रकाश' !

और 'नवम' में विद्या-अविद्या-
मुक्ति और मोक्ष-व्यवहार !
'दसवें' में है अनाचार-आचार
व भक्ष्याभक्ष्य - विचार !

'एकादश' में भारतीय
मत-मतान्तर खण्डन-मण्डन!
'द्वादश' में है चार्वाक
व बौद्ध-जैन मत-विवेचन !

कसे कसौटी पर विभिन्न मत
उन पर फेंका तीव्र प्रकाश !
ऋषिवर का 'सत्यार्थ प्रकाश' !
ऋषिवर का 'सत्यार्थ प्रकाश' !

है 'तेरहवें' समुल्लास में
ईसाई मत-विवेचना !
चौदहवें में मुस्लिम-मत
पर है किया विचार घना !

धन्य-धन्य ऋषि दयानन्द जी

ऋषिवर दयानन्द ने आकर
कितने किये अलौकिक काम !
जिनसे चमक रहा है उनका
जगमग-जगमग जग में नाम !

वेदों का डंका बजवाया,
गूँजा जिसका दिशि-दिशि नाद !
भागा भारत की जनता का
तब अज्ञान-प्रपंच-प्रमाद !

घोर अन्ध-विश्वास देश में
फैल रहे थे चारों ओर !
दीन-अनाथों, विधवाओं का
गूँज रहा रोदन का शोर !

जात-पाँत का, छुआछूत का
घना अँधेरा छाया था !
फैल रही हर ओर निराशा
भीषण दुर्दिन आया था !

ऋषि ने फैलाया भारत में
ऐसा अनुपम ज्ञान-प्रकाश !
जिससे सामाजिक कुरीतियों
का झट होने लगा विनाश !

स्त्री-शिक्षा का ऋषिवर ने
जोरदार था किया प्रचार !
फैली थी हर ओर अशिक्षा
उस पर कस कर किया प्रहार !

कितने विद्यालय खुलवाये—
शिक्षा-केन्द्र जहाँ सद्ज्ञान !
भारत के नवयुवकों को हैं
देते नित्य श्रेष्ठ विद्वान !

आज बालिकाओं के हमको
जगह-जगह दिखते स्कूल !
ऋषिवर के ही सद्प्रयास से
खिलते रंग-बिरंगे फूल !

भारत में विधवा-विवाह का
प्रचलित चलन कराया था !
उनके पतझड़-से जीवन में
मृदु वसन्त मुस्काया था!

कुरीतियों का दुर्ग ढहाया,
सुरीतियों का कर संचार !
पावन 'आर्य समाज' बनाया
जो कर रहा देश-उपकार !

अनुपम सेवा सौ वर्षों से
करता आया 'आर्यसमाज' !
दिशि-दिशि जागृति-ज्योति जलाकर
देश जगाया 'आर्य समाज' !

शताब्दी का समारोह हम
सबने मुदित मनाया था!
पुनर्जागरण का सन्देश
विश्व को श्रेष्ठ सुनाया था !

कितने ग्रन्थ-रत्न लिख-लिख कर
ऋषिवर ने फैलाया ज्ञान !
जन-जन ने पढ़-पढ़ कर जिनको
प्रमुदित किया आत्म-उत्थान !

पुनर्जागरण-ज्योति देश में
ऋषि ने अजब जगाई थी !
सदियों की रोती मानवता
हर्षित हो मुस्काई थी !

अपने जीवन भर ऋषिवर ने
फैलाया था शुभ्रालोक !
मानवता की सेवा करके
उसे विविध विधि किया अशोक !

और अन्त में जब ऋषिवर का
होने को आया निर्वाण !
क्षमाशीलता का तब ऋषि ने
किया प्रदर्शित कर्म महान् !

निज घातक को छुड़वाया था
उस महात्मा ने हँस कर !
कहो—कहाँ दृष्टान्त मिलेगा
क्षमाशीलता का बढ़ कर?

जिसने विष देकर महर्षि के
जीवन का कर डाला अन्त !
उसे क्षमा कर दिया ! चकित हो
देख रहा था सकल दिगन्त !

धन्य-धन्य ऋषि दयानन्द जी !
धन्य-धन्य सत्कर्ष महान् !
देते रहे सदा जीवन में
ज्ञान व सत्‌शिक्षा का दान !

निज आत्मा की उन्नति के संग
करते रहे जगत-कल्याण !
और अन्त में हँसते-हँसते
प्राप्त कर लिया था निर्वाण !!

ऋषिवर दयानन्द

ऋषिवर दयानन्द ! तेरे हैं
हम सब पर असीम उपकार !
दिन-दिन बिगड़ रहा था भारत,
तूने आकर दिया सुधार !

था अज्ञान-अँधेरा छाया,
पाखण्डों ने जाल बिछाया।
गौरव-गरिमा के उन्नायक !
तूने सोता देश जगाया !

सीधी-सच्ची बात बतायी,
पाखण्डों पर किया प्रहार !
ऋषिवर दयानन्द ! तेरे हैं
हम सब पर असीम उपकार।

दलित-अछूत, दुःखी विधवाएँ !
नानाविधि दारुण दुःख पाएँ !
कितनी ही कुरीतियों के घुन,
जर्जर नित्य समाज बनाएँ !

कुरीतियों का दुर्ग ढहाया,
और बहा दी सुख की धार !
ऋषिवर दयानन्द ! तेरे हैं
हम सब पर असीम उपकार !

था दासत्व-निबिड़ तम छाया,
तूने आशा-दीप दिखाया !
है स्वराज्य ही श्रेष्ठ जगत में,
तूने हमको देव ! बताया।

स्वाभिमान की ज्योति जगाई,
जागृति का करके संचार !
ऋषिवर दयानन्द ! तेरे हैं
हम सब पर असीम उपकार !

तूने 'आर्यसमाज' बनाया,
हम सब को सद्ज्ञान सिखाया !
लोक तथा परलोक-सुधारक—
तूने वेद-प्रकाश दिखाया !

जग में 'आर्यसमाज' अमर हो,
जन-जन की है यही पुकार !
ऋषिवर दयानन्द ! तेरे हैं
हम सब पर असीम उपकार !

'आर्यसमाज' समाज-सुधारक !
पावन वैदिक ज्ञान-प्रसारक !
बिछुड़ों को है गले लगाता,
गिरे हुओं का है उद्धारक !

सौ वर्षों से है महर्षि की
शिक्षा का कर रहा प्रचार!
ऋषिवर दयानन्द ! तेरे हैं
हम सब पर असीम उपकार !

□□